

{2004} SUPP. 4 S.C.R. 145

म्यूनिसिपल कॉर्पोरेशन, फरीदाबाद

बनाम

सिरी निवास

06 सितंबर, 2004

[एन. संतोष हेगड़े एवं एस. बी. सिन्हा, जे. जे.]

भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226 - न्यायिक समीक्षा
- औद्योगिक न्यायाधिकरण का दायरा यह अभिनिर्धारित करता है कि प्रतिवादी ने एक वर्ष में 240 दिन काम पूरा नहीं किया है और वह किसी भी राहत का हकदार नहीं है - रिट याचिका - में उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चूंकि अपीलकर्ता ने न्यायाधिकरण के समक्ष प्रासंगिक सूची प्रस्तुत नहीं की है, इसलिए इसके खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए, क्योंकि इसके पास सबसे अच्छा सबूत था। केवल उसी आधार पर रिट याचिका की अनुमति दी गई थी, जिसमें कहा गया था कि यह माना जा सकता है कि प्रतिवादी ने 240 दिनों तक काम किया था। अपील पर कहा गया:- न्यायाधिकरण ने अपीलार्थी के खिलाफ कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला, विशेष रूप से प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य

की प्रकृति को देखते हुए ऐसा करना उसके अधिकार क्षेत्र के भीतर था, जो अपने मामले के समर्थन में कुछ साक्ष्य देने में विफल रहा। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष के आधार पर न्यायाधिकरण के पुरस्कार को रद्द करने में गलती की, बिना कोई कारण बताए कि न्यायाधिकरण के विवेचनात्मक अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कानून में खराब क्यों था। उसने केवल न्यायाधिकरण औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 - धारा 25 एफ और 25 बी - साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 114 (एफ) के समक्ष पक्षों द्वारा भरोसा की गई सामग्री के आधार पर निर्णय पारित किया।

श्रम कानून - छंटनी - औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 25 एफ में निहित पूर्ववर्ती शर्तों का गैर - अनुपालन - कर्मकार पर सबूत का बोझ।

श्रम कानून औद्योगिक निर्णय - साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान, 1872 लागू नहीं। सामान्य सिद्धांत हालांकि लागू होते हैं। औद्योगिक न्यायाधिकरण को यह देखने की आवश्यकता है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किया जाता है।

प्रत्यर्थी ने दावा किया कि उसने अपीलार्थी के साथ ट्यूबवेल ऑपरेटर के रूप में दिनांक 05.08.1994 से दिनांक 31.12.1994 और 01.01.1995 से 16.05.1995 तक काम किया था। उनकी सेवाओं को

दिनांक 17.05.1995 पर या उसके आसपास समाप्त कर दिया गया था औद्योगिक विवाद उठा, राज्य सरकार ने औद्योगिक न्यायाधिकरण के समक्ष निर्देश दिया। न्यायाधिकरण के समक्ष प्रत्यर्थी का मामला यह था कि क्योंकि उसने एक वर्ष में 240 दिनों के लिए काम पूरा कर लिया था और यह कि उसका धारा 25 औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 का पालन नहीं किया गया।

अपीलार्थी ने तर्क दिया कि प्रतिवादी ने केवल 136 दिन के लिए काम किया था। पिछले बारह महीनों के दौरान दैनिक मजदूरी पर और उक्त नौकरी पर कोई ग्रहणाधिकार नहीं था। न्यायाधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि प्रत्यर्थी के कार्य दिवसों की कुल संख्या 184 दिन थी और इस प्रकार, एक वर्ष में 240 दिन काम पूरा नहीं करने के कारण वह किसी भी राहत का हकदार नहीं था। न्यायाधिकरण ने देखा कि न तो प्रबंधन और न ही कर्मचारी ने संबंधित मस्टर रोल का प्रस्तुत करने की देखभाल की जो उनकी संयुक्त देनदारी थी और आगे यह देखा कि कर्मचारी ने उन्हें तलब भी नहीं किया, हालांकि प्रबंधन ने मस्टर रोल का प्रस्तुत नहीं किया था। प्रतिवादी ने उक्त पुरस्कार से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की।

उच्च न्यायालय का विचार था कि जैसा कि अपीलार्थी ने औद्योगिक न्यायाधिकरण के समक्ष प्रासंगिक दस्तावेज पेश नहीं किये,

इसलिए इसके खिलाफ एक प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए, क्योंकि इसके पास सर्वोत्तम साक्ष्य था और इस प्रकार प्रत्यर्थी के लिए अपीलार्थी को ऐसा करने के लिए बुलाना आवश्यक नहीं था। इसके अलावा उच्च न्यायालय का विचार था कि सबूत का भार अपीलार्थी पर नहीं हो सकता है, लेकिन दस्तावेजों को पेश न करने की स्थिति में, इसके खिलाफ एक प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जा सकता है। केवल उसी आधार पर, रिट याचिका को यह मानते हुए अनुमति दी गई थी कि यह माना जा सकता है कि प्रतिवादी ने 240 दिनों तक काम किया था। नतीजतन, प्रतिवादी को मांग की तारीख से 75 प्रतिशत बकाया वेतन के साथ सेवा में बहाल करने का निर्देश दिया गया था। इसलिए यह अपील की गई है।

इस न्यायालय में प्रस्तुत अपील में कहा गया है कि उच्च न्यायालय ने कानून में एक गंभीर त्रुटि की है, क्योंकि उसने प्रतिवादी द्वारा दायर रिट याचिका को केवल मस्टर रोल के गैर-प्रस्तुत के लिए उसके द्वारा निकाले गए प्रतिकूल आधार पर अनुमति दी थी।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए यह माना कि -

1. उच्च न्यायालय ने केवल मस्टर रोल प्रस्तुत नहीं करने के लिए अपीलकर्ताओं के खिलाफ निकाले गए प्रतिकूल निष्कर्ष के आधार पर न्यायाधिकरण के पुरस्कार को रद्द करने में एक स्पष्ट त्रुटि की। [150 - ई]

2. भारतीय साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान एक औद्योगिक निर्णय पर लागू नहीं होते हैं। हालाँकि, इसका सामान्य सिद्धांत ही लागू होता है। औद्योगिक न्यायाधिकरण के लिए यह देखना भी अनिवार्य है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किया जाता है। [150 - एफ]

3. सबूत का भार प्रत्यर्थी पर यह दिखाने के लिए था कि उसने अपने कथित से पहले के बारह महीनों में 240 दिनों तक काम किया था। पुरस्कार से यह प्रतीत नहीं होता है कि कर्मचारी ने अपने इस तर्क के समर्थन में कोई भी सबूत प्रस्तुत किया है कि उसने औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 25 बी की आवश्यकताओं का अनुपालन किया था। अपने तर्क के समर्थन में खुद की जाँच करने के अलावा उन्होंने अपीलार्थी के कार्यालय से मस्टर रोल सहित कोई भी दस्तावेज़ प्रस्तुत नहीं किया या मंगाया नहीं। यह असंभव है कि स्थानीय प्राधिकरण के तहत काम करने वाले व्यक्ति के पास न्यायाधिकरण के समक्ष अपने दावे का समर्थन करने के लिए कोई दस्तावेज़ी सबूत नहीं होगा। मस्टर रोल के अलावा वह अपनी नियुक्ति की पेशकश के नियम और शर्तों और उपरोक्त अवधि (दिनांक 05.08.1994 से 16.05.1995) के दौरान काम करने के लिए प्राप्त पारिश्रमिक भी दिखा सकता था। यहां तक कि उन्होंने अपने मामले के समर्थन में किसी अन्य गवाह से भी पूछताछ नहीं की। [150-जी; 151-डी, ई, एफ]

4.1. साक्ष्य प्रस्तुत न करने के लिए प्रतिकूल निष्कर्ष के रूप में अनुमान हमेशा वैकल्पिक होता है और यह उन कारकों में से एक है, जिन्हें सूची में शामिल तथ्यों की पृष्ठभूमि में ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। इस प्रकार, अनुमान अनिवार्य नहीं है, क्योंकि जानबूझकर प्रस्तुत न करने के बावजूद, अन्य परिस्थितियाँ मौजूद हो सकती हैं, जिन पर ऐसा जानबूझकर प्रस्तुत न करना कुछ उचित आधारों पर उचित पाया जा सकता है। वर्तमान मामले में, औद्योगिक न्यायाधिकरण ने अपीलार्थी के खिलाफ कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला। ऐसा करना विशेष रूप से प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए उसके अधिकार क्षेत्र में था। [151-जी, एच; 152-ए, बी]

4.2. उच्च न्यायालय द्वारा इस बात का कोई कारण नहीं बताया गया है कि न्यायाधिकरण के विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग कानूनी रूप से क्यों खराब था। इस प्रकृति के मामले में, यह सामान्य बात है कि उच्च न्यायालय न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए, किसी न्यायाधिकरण के विवेक में तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक कि वह अवैध या तर्कहीन नहीं पाया जाता है। [152 - बी, सी]

महंत श्री श्रीनिवास रामानुज दास बनाम सूरजनारायण दास व अन्य, ए. आई. आर. (1967) एस. सी. 256 और श्रीमती इंदिरा नेहरू

गांधी बनाम श्री राज नारायण, ए. आई. आर. (1975) एस. सी. 2299,
का उल्लेख किया गया है।

4.3. इसके अलावा उपबंधों का लाभ प्राप्त करने के लिए एक पक्ष भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 (एफ) में उसके मामले के समर्थन में कुछ साक्ष्य होना चाहिए। यहाँ प्रत्यर्थी ऐसा करने में विफल रहा। [153 - सी]

गोपाल कृष्णाजी केतकर बनाम मोहम्मद हाजी लतीफ और अन्य, ए. आई. आर. (1968) एस. सी. 1413, विशिष्ट।

5. उत्सुकतावश प्रतिवादी ने कुछ मस्टर रोल की प्रतियां इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की। यदि उसके पास उक्त दस्तावेज थे, तो यह किसी की कल्पना को धोखा देता है कि उन्हें न्यायाधिकरण के समक्ष क्यों पेश नहीं किया गया था। प्रत्यर्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष कुछ दस्तावेज दायर किए, लेकिन उन्हें स्वीकार नहीं किया गया। इसलिए उच्च न्यायालय ने न्यायाधिकरण के समक्ष पक्षों द्वारा भरोसा की गई सामग्री के आधार पर ही आक्षेपित निर्णय पारित करने के लिए आगे बढ़ा। [153 - जी, एच]

सिविल अपील न्याय निर्णय: सिविल अपील संख्या 1851/2002

पंजाब और हरियाणा के निर्णय और आदेश दिनांक 03.05.2001 से उच्च न्यायालय सी.डब्ल्यू.पी. संख्या 624/2000

के साथ

सी.ए. नंबर 4563/2002

अपीलकर्ता की ओर से प्रवीण कुमार राय, सुश्री कविता वाडिया और जे. पी. ढांडा।

प्रतिवादी की ओर से डी. के. ठाकुर, बी. के. झा और देबाशीष मिश्रा।

न्यायालय का निम्नलिखित निर्णय सुनाया गया:-

एस. बी. सिन्हा, जे.:

तथ्यों और कानून के समान प्रश्नों से जुड़ी इन दोनों अपीलों पर एक साथ सुनवाई की गई और इस सामान्य निर्णय द्वारा इनका निपटारा किया जा रहा है। हालाँकि, मामले की तथ्यात्मक स्थिति 2002 की सिविल अपील संख्या 1851/2002 से देखी जा रही है।

अपीलार्थी, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 2000 के सीडब्ल्यूपी संख्या 624/2000 में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 03.05.2001 से व्यथित और असंतुष्ट होकर हमारे समक्ष अपील कर रहा है, जिसके तहत रिट याचिका दायर की गई है। इंडस्ट्रियल फरीदाबाद द्वारा पारित दिनांक 13.08.1999 के एक पुरस्कार पर सवाल उठाया था, जिसे अनुमति दी गई है।

इस मामले का मूल तथ्य बहुत अधिक विवादित नहीं है। कथित तौर पर प्रतिवादी ने अपीलार्थी के साथ ट्यूबवेल ऑपरेटर के रूप में दिनांक 05.08.1994 से 31.12.1994 तक काम किया। उन्होंने कथित तौर पर सेक्टर 37, ओल्ड जोन II में दिनांक 01.01.1995 से 16.05.1995 तक काम किया। उनकी सेवाएं दिनांक 17.05.1995 को या इसके आसपास समाप्त कर दी गईं, जिसके बाद एक औद्योगिक विवाद उठाया गया था।

हरियाणा सरकार ने पीठासीन अधिकारी, औद्योगिक न्यायाधिकरण-सह-श्रम न्यायालय के समक्ष ईएनडीएसटी. नंबर 32410-15 दिनांक 07.10.1995 के माध्यम से औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 की उप-धारा (1) के खंड (सी) द्वारा प्रदत्त शक्ति का निम्नलिखित शब्दों में प्रयोग करते हुए:

“क्या श्री श्रीनिवास की सेवाओं को समाप्त करने का कोई औचित्य है और यदि नहीं, तो वह किस राहत के हकदार हैं।”

न्यायाधिकरण के समक्ष प्रतिवादी का मामला वैसा ही था जैसा कि उसने किया था। एक वर्ष में 240 दिनों के लिए काम पूरा करने के बाद, छंटनी का कथित आदेश अवैध है, क्योंकि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25 एफ में निहित पूर्ववर्ती शर्तों का पालन नहीं किया गया था। दूसरी ओर, अपीलार्थी का तर्क यह था कि उक्त प्रत्यर्थी ने

पिछले 12 दिनों के दौरान केवल 136 दिनों के लिए काम किया था। दैनिक मजदूरी पर महीनों और उक्त नौकरी पर कोई ग्रहणाधिकार नहीं था।

न्यायाधिकरण द्वारा अभिलेखों पर रखी गई सभी सामग्रियों पर विचार करने पर न्यायाधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि कर्मचारी के कार्य दिवसों की कुल संख्या 184 दिन थी और इस प्रकार, एक वर्ष में 240 दिन काम पूरा नहीं करने के कारण वह किसी भी राहत का हकदार नहीं था। विद्वत न्यायाधिकरण ने देखा कि न तो प्रबंधन और न ही कर्मचारी ने अगस्त, 1994 से मस्टर रोल तैयार करने की परवाह की, जो उनका संयुक्त दायित्व था। यह आगे देखा गया कि कर्मचारी ने उसे तलब भी नहीं किया, हालांकि प्रबंधन ने मस्टर रोल का प्रस्तुत नहीं किया था।

प्रतिवादी ने उक्त पुरस्कार से व्यथित और असंतुष्ट होकर पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की गई, जिसे सीडब्ल्यूपी संख्या 624/2000 में चिह्नित किया गया था। उच्च न्यायालय के समक्ष प्रतिवादी ने कुछ दस्तावेजों को प्रस्तुत किया, जो रिकॉर्ड पर नहीं लिए गए प्रतीत होते हैं।

उच्च न्यायालय ने राय दी:

"..... जो भी हो, प्रतिवादी ने अपने लिखित बयान में इस तथ्य को स्वीकार किया है कि याचिकाकर्ता को दिनांक 01.01.1995 को रखा गया था और उसने दिनांक 16.09.1995 तक काम किया था। प्रत्यर्थी द्वारा

उल्लिखित कार्य अवधि की यह अवधि निश्चित रूप से 240 दिनों से अधिक है। सवाल यह है कि क्या याचिकाकर्ता ने वास्तव में इस अवधि के लिए काम किया है या नहीं।”

हालाँकि, उच्च न्यायालय का विचार था कि चूंकि अपीलार्थी ने औद्योगिक न्यायाधिकरण के समक्ष प्रासंगिक दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किए हैं, इसलिए इसके खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए, क्योंकि इसके पास सबसे अच्छा सबूत था और इस प्रकार, इसमें पहले प्रतिवादी के लिए यह आवश्यक नहीं था कि वह अपीलार्थी को ऐसा करने के लिए कहे। इसके अलावा उच्च न्यायालय का विचार था कि सबूत का भार अपीलार्थी पर नहीं हो सकता है, लेकिन दस्तावेजों को पेश न करने की स्थिति में, उसके खिलाफ एक प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जा सकता है। केवल उसी आधार पर रिट याचिका की अनुमति दी गई थी जिसमें कहा गया था कि यह माना जा सकता है कि प्रतिवादी ने 240 दिनों तक काम किया था। नतीजतन प्रतिवादी को मांग की तारीख से 75 प्रतिशत बकाया वेतन के साथ सेवा में बहाल करने का निर्देश दिया गया।

अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री डी. के. ठाकुर उपस्थित हुए, जो उच्च न्यायालय के फैसले का समर्थन करेंगे।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान किसी औद्योगिक निर्णय में लागू नहीं होते हैं। हालाँकि, इसके सामान्य सिद्धांत लागू होते हैं।

औद्योगिक न्यायाधिकरण के लिए यह देखना भी अनिवार्य है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन किया जाए। यहाँ प्रतिवादी पर यह साबित करने का भार था कि उसने अपनी कथित छंटनी से पहले पिछले बारह महीनों में 240 दिनों तक काम किया था। औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25-एफ के अनुसार किसी कर्मचारी को नौकरी से निकालने का आदेश तब तक प्रभावी नहीं होगा जब तक कि पूर्ववर्ती शर्तों को पूरा नहीं किया जाता है। धारा 25-एफ एक वैध छंटनी को प्रभावी बनाने के लिए नियोक्ता द्वारा निम्नलिखित शर्तों को पूरा करने के लिए अभिनिर्धारित करती है:

- (i) कारणों को दर्शाते हुए लिखित में एक महीने का नोटिस उसके बदले में छंटनी या मजदूरी;
- (ii) पंद्रह दिनों के बराबर मुआवजे का भुगतान, निरंतर सेवा के प्रत्येक पूर्ण वर्ष या छह महीने से अधिक के किसी भी हिस्से के लिए औसत वेतन।

उक्त उद्देश्य के लिए अधिनियम की धारा 25-बी में निहित निरंतर सेवा की परिभाषा पर ध्यान देना आवश्यक है। अधिनियम की धारा 25-बी की उप-धारा (2) के अनुसार यदि किसी श्रमिक ने उस तारीख से पहले बारह कैलेंडर महीनों की अवधि के दौरान, जिसके संदर्भ में गणना की जानी है, वास्तव में एक वर्ष की अवधि के भीतर 240 दिनों के लिए

नियोक्ता के अधीन काम किया है, तो उसे निरंतर सेवा में माना जाएगा। इस प्रकार उक्त प्रावधान के कारण एक कानूनी कल्पना निर्मित होती है। प्रतिवादी की छंटनी दिनांक 17.05.1995 को हुई। यह गणना करने के उद्देश्य से कि क्या उन्होंने एक वर्ष के भीतर 240 दिनों की अवधि के लिए काम किया था या नहीं, इसलिए न्यायाधिकरण के लिए इस तथ्य के निष्कर्ष पर पहुंचना आवश्यक था कि दिनांक 05.08.1994 से 16.05.1995 के बीच की अवधि के दौरान उन्होंने 240 दिनों से अधिक समय तक काम किया था। जैसा कि यहाँ पहले देखा गया है, सबूत का भार काम करने वाले पर था। पुरस्कार से यह प्रतीत नहीं होता है कि कर्मचारी ने अपने इस तर्क के समर्थन में कोई सबूत पेश किया कि उसने औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 25 बी की आवश्यकताओं का अनुपालन किया है। अपने तर्क के समर्थन में खुद की जाँच करने के अलावा उन्होंने इसमें अपीलार्थी के कार्यालय से मस्टर रोल सहित कोई दस्तावेज़ प्रस्तुत नहीं किया या मंगाया नहीं। यह असंभव है कि स्थानीय प्राधिकरण में काम करने वाले व्यक्ति के पास अपने दावे का समर्थन करने के लिए कोई दस्तावेज़ी सबूत नहीं होगा। मस्टर रोल के अलावा वह अपनी नियुक्ति के प्रस्ताव के नियम और शर्तों और उपरोक्त अवधि के दौरान काम करने के लिए उन्हें प्राप्त पारिश्रमिक को दिखा सकते थे। उन्होंने अपने मामले के समर्थन में किसी अन्य गवाह से पूछताछ भी नहीं की।

कानून की अदालत एेसे मामले में भी, जहां भारतीय साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान लागू होते हैं, यह मान सकती है या नहीं भी मान सकती कि यदि किसी पक्ष ने सर्वोत्तम साक्ष्य होने के बावजूद उसे प्रस्तुत नहीं किया होता तो यह उसकी दलीलों के खिलाफ जाता। हालाँकि, मामला अलग होगा जहाँ अदालत के निर्देश के बावजूद सबूत को रोक दिये जाते हैं। साक्ष्य के गैर प्रस्तुत के लिए प्रतिकूल अनुमान के बारे में धारणा हमेशा वैकल्पिक होती है और यह उन कारकों में से एक है, जिन कारकों को सूची में शामिल तथ्यों की पृष्ठभूमि में ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। इस प्रकार, यह धारणा अनिवार्य नहीं है, क्योंकि जानबूझकर गैर प्रस्तुत कुछ उचित आधारों पर उचित पाया जा सकता है। वर्तमान मामले में, औद्योगिक न्यायाधिकरण ने अपीलार्थी के खिलाफ कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला। ऐसा करना विशेष रूप से प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए उसके अधिकार क्षेत्र में था।

उच्च न्यायालय द्वारा इस बात का कोई कारण नहीं बताया गया है कि न्यायाधिकरण के विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग कानूनी रूप से क्यों खराब था। इस प्रकार के मामले में, यह सामान्य है कि उच्च न्यायालय न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए न्यायाधिकरण के विवेकाधिकार में हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक कि उसे अवैध या तर्कहीन नहीं पाया जाता है।

महांत श्री श्रीनिवास रामानुज दास बनाम सुरजनारायण दास
व अन्य, ए. आई. आर. (1967) एस. सी. 256 में न्यायालय ने
प्रतिपादित किया है कि-

" 28 महांत गवाह पेटी में नहीं आया है। सभी दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किए गए हैं। वास्तव में यह वादी ही है, जिसने कई दस्तावेज प्रस्तुत किए हैं, लेकिन उसने अपने कब्जे वाले दस्तावेजों में से चुन लिया था। कुछ दस्तावेज जो नीचे दिए गए प्रश्न पर कुछ प्रकाश डाल सकते थे, प्रस्तुत नहीं किये गये हैं। यह सच है कि प्रतिवादी प्रत्यर्थी ने भी वादी-अपीलार्थी से उन दस्तावेजों को प्रस्तुत करने के लिए नहीं कहा जिनके अस्तित्व को वादी के एक या दूसरे गवाह द्वारा स्वीकार किया गया था और इसलिए, सख्ती से कहें तो दस्तावेजों की सूची प्रस्तुत न करने से वादी के प्रतिकूल कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है। न्यायालय इस तरह की चूक से यह निष्कर्ष निकालने की स्थिति में नहीं हो सकता है कि उन दस्तावेजों ने सीधे प्रतिवादी के लिए मामले को स्थापित किया होगा। लेकिन यह साक्ष्य या स्थापित तथ्यों से किसी भी प्रत्यक्ष निष्कर्ष को तौलने में विचार कर सकता है कि दस्तावेज प्रतिवादी के मामले का पक्ष ले सकते हैं।"

फिर भी श्रीमती इंदिरा नेहरू गांधी बनाम श्री राज नारायण, ए.आई.आर. (1975) एस. सी. 2299, कानून इस न्यायालय द्वारा निम्नलिखित शर्तों में निर्धारित किया गया है:

"चुनाव याचिकाकर्ता की ओर से चुनाव खर्च पर तीसरा और अंतिम और सहायक दलील श्री दल बहादुर सिंह की थी कि मूल प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत नहीं किये जाने से मूल प्रतिवादी के विरुद्ध किसी प्रकार की धारणा उत्पन्न होती है। मुझे नहीं लगता कि याचिकाकर्ता का बोझ उस पर डालना संभव है, जिसके मामले में ऐसा कभी नहीं था कि श्री दल बहादुर सिंह ने उसकी ओर से कोई पैसा खर्च किया हो। एम. च्येन्ना रेड्डी बनाम रामचंद्र राव, (1972) 40 एली एल. आर. 390 पेज नंबर 415 (एससी) पर यह प्रस्तुत करने के लिए भरोसा किया गया था कि एक सफल उम्मीदवार के खिलाफ उसके संस्करण का समर्थन करने के लिए उपलब्ध साक्ष्य प्रस्तुत न करने से एक धारणा उत्पन्न हो सकती है। ऐसी धारणा, धारा 114 के तहत यह याद रखना होगा कि साक्ष्य अधिनियम हमेशा वैकल्पिक और एक है। वास्तव में, तथ्यों के पूरे समूह पर निर्भर करता है यह अनिवार्य नहीं है।"

इसके अलावा भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 (एफ) में निहित प्रावधानों का लाभ प्राप्त करने के लिए एक पक्ष को अपने मामले का समर्थन करना होगा। यहाँ प्रतिवादी ऐसा करने में विफल रहा।

उच्च न्यायालय ने अपने फैसल के समर्थन में गोपाल कृष्णजी केतकर बनाम मोहम्मद हाजी लतीफ और अन्य, ए. आई. आर. (1968) एस. सी. 1413, में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है, जिसमें अदालत ने अन्य साक्ष्यों के साथ-साथ दरगाह से आय के संबंध में भी विचार किया था। इस तथ्य को ध्यान में रखा कि अपीलार्थी ने अपने साक्ष्य में स्वीकार किया कि वह दरगाह में भूखंड की आय का आनंद ले रहा था। लेकिन अपने तर्क को साबित करने के लिए कोई विवरण प्रस्तुत नहीं किया। यह स्वीकार करने के बावजूद कि "उसे दरगाह की आय का रिकॉर्ड मिला था और उस खाते को अलग रखा गया था" अपीलार्थी ने न तो अपने खाते में या दरगाह के खाते में यह नहीं दिखाया था कि उक्त भूखंड से आय का कैसे निपटान किया गया था। गोपाल कृष्णजी मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय ने कोई कानून नहीं बनाया कि जो सभी स्थितियों में भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 (एफ) के संदर्भ में अनुमान लगाया जाना चाहिए। इस प्रकार उक्त निर्णय का वर्तमान मामले के तथ्य में कोई अनुप्रयोग नहीं है।

दिलचस्प बात यह है कि प्रतिवादी ने इस अदालत के समक्ष कुछ मस्टर रोल की प्रतियां प्रस्तुत कीं। यदि उसके पास उक्त दस्तावेज थे, तो यह किसी की कल्पना को धोखा देता है कि उन्हें न्यायाधिकरण के समक्ष क्यों पेश नहीं किया गया था। जैसा कि यहाँ पहले संकेत दिया गया है, उन्होंने उच्च न्यायालय के समक्ष कुछ दस्तावेज दायर किए, लेकिन

उन्हें स्वीकार नहीं किया गया। इसलिए उच्च न्यायालय ने न्यायाधिकरण के समक्ष पक्षों द्वारा भरोसा की गई सामग्री के आधार पर ही आक्षेपित निर्णय पारित किया। हमारी राय में, उच्च न्यायालय ने केवल आधार पर न्यायाधिकरण के निर्णय को रद्द करके एक स्पष्ट त्रुटि की है। मस्टर रोल प्रस्तुत न करने पर अपीलार्थी के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला गया।

उपरोक्त कारणों से आक्षेपित कानून की दृष्टि से टिकाऊ नहीं है और तदनुसार उन्हें रद्द किया जाता है।

उक्त अपीलें स्वीकार की जाती हैं। इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

बी.बी.बी.

अपील स्वीकार की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी नीलम नाहर (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।